Review Article

International Journal of Social Science & Innovations

Volume 1 Issue 1 (June - 2026) ISSN – xxxx-xxxx

संपूर्ण क्रांति' के प्रणेता: 1974 के छात्र आंदोलन और भ्रष्टाचार विरोधी संघर्ष का नेतृत्व: एक शोध समीक्षा

मयंक कुमार [a]*

[a] विश्वविद्यालय राजनीती विज्ञानं विभाग, मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

ARTICLE INFO

कुंजी शब्द:
गुटनिरपेक्ष आंदोलन
शीत युद्ध
पंचशील सिद्धांत
वैश्विक कूटनीति
नवउपनिवेशवाद
संयुक्त राष्ट्र

ABSTRACT

1974 का छात्र आंदोलन भारत के राजनीतिक इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ था। यह आंदोलन बिहार से शुरू हुआ और देखते ही देखते पूरे देश में फैल गया। इसकी सबसे प्रमुख विशेषता थी कि यह केवल छात्र विरोध तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह एक व्यापक भ्रष्टाचार विरोधी संघर्ष में परिवर्तित हो गया। इस आंदोलन का नेतृत्व जयप्रकाश नारायण (जेपी) ने किया, जिन्होंने इसे 'संपूर्ण क्रांति' का नाम दिया। यह आंदोलन न केवल तत्कालीन इंदिरा गांधी सरकार के लिए चुनौती बना, बल्कि इसने भारतीय लोकतंत्र में जनता की भूमिका को भी पुनर्परिभाषित किया। इस लेख में, 1974 के छात्र आंदोलन के कारणों, विकास, प्रभावों और संपूर्ण क्रांति की विचारधारा का विश्लेषण किया गया है।

भूमिका:

1970 के दशक में भारत राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक अस्थिरता के दौर से गुजर रहा था। भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, बढ़ती महंगाई और शासन में बढ़ती तानाशाही प्रवृत्ति से जनता त्रस्त थी। इसी पृष्ठभूमि में बिहार के छात्र आंदोलन (Bihar Student Movement, 1974) का जन्म हुआ, जिसने जल्द ही राष्ट्रीय स्तर पर एक जन आंदोलन का रूप ले लिया। इस आंदोलन को सही दिशा देने और इसे एक व्यापक सामाजिक क्रांति में बदलने का श्रेय जयप्रकाश नारायण (जेपी) को जाता है। उन्होंने इसे 'संपूर्ण क्रांति' का नाम देकर इसे केवल एक राजनीतिक विरोध के बजाय सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाया [2].

1. छात्र आंदोलन का उदय और विस्तार

1974 का छात्र आंदोलन भारतीय राजनीतिक इतिहास के सबसे महत्वपूर्ण आंदोलनों में से एक था। यह आंदोलन मूलतः बिहार से शुरू हुआ, लेकिन देखते ही देखते पूरे देश में फैल गया और व्यापक सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तन का कारण बना। इस आंदोलन का नेतृत्व जयप्रकाश नारायण (जेपी) ने किया और इसे "संपूर्ण क्रांति" का नाम दिया गया। इस आंदोलन ने तत्कालीन सरकार की नीतियों को चुनौती दी और अंततः भारत में आपातकाल (1975-77) के लिए पृष्ठभूमि तैयार की।

1.1 आंदोलन के प्रमुख कारण

1974 के छात्र आंदोलन के पीछे कई सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक कारण थे। ये कारण तत्कालीन परिस्थितियों की असमानता, प्रशासनिक कुप्रबंधन और जनता की बढ़ती असंतोष की भावना से जुड़े थे।

- **भ्रष्टाचार:** 1970 के दशक में भारत में भ्रष्टाचार चरम पर था। सरकारी तंत्र में रिश्वतखोरी और सत्ता का दुरुपयोग आम बात हो गई थी। राजनीतिक और प्रशासनिक तंत्र में बढ़ते भ्रष्टाचार ने युवाओं और आम जनता को सरकार के खिलाफ खड़ा कर दिया [3].
- **बेरोजगारी:** भारत में तेजी से बढ़ती जनसंख्या के बावजूद पर्याप्त रोजगार के अवसर नहीं थे। शिक्षित युवाओं को नौकरियाँ नहीं मिल रही थीं, जिससे वे हताश और आक्रोशित हो गए। नौकरी की असमान उपलब्धता और

* Corresponding author.
E-mail address: mk357999@gmail.com (मयंक कुमार)

View Online: https://pub.aietr.ac.in/IJSSI/view-article?pii=S0000000026407324
Received 05 Feb 2026; Revised 05 Mar 2026; Accepted 13 Apr 2026; Available online 16 Apr 2026
Published 15 June 2026.
© 2026 Asha Institute of Educational Training & Research, all rights are reserved.

आरक्षण प्रणाली से भी असंतोष था, जिससे आंदोलन को बल मिला [4].

- **महंगाई:** 1973-74 के दौरान भारत में महंगाई दर बहुत अधिक थी। आवश्यक वस्तुओं की कीमतें लगातार बढ़ रही थीं, जिससे आम जनता विशेष रूप से मध्यम और निम्न वर्ग के लोग अत्यधिक प्रभावित हुए। खाद्य सामग्री, पेट्रोल और अन्य आवश्यक वस्तुओं की कीमतें सरकार की नीतियों के कारण तेजी से बढ़ रही थीं [5].
- **प्रशासनिक दमन:** सरकार के दमनकारी रवैये ने जनता में आक्रोश को और बढ़ा दिया। पुलिस द्वारा छात्रों और प्रदर्शनकारियों पर लाठीचार्ज, गिरफ्तारी और अन्य दमनकारी कदम उठाए गए। यह प्रशासनिक दमन आंदोलनकारियों के गुस्से का कारण बना और आंदोलन और अधिक व्यापक हो गया [6].
- **बिहार की राजनीतिक स्थिति:** बिहार में 1970 के दशक में कांग्रेस सरकार के खिलाफ व्यापक असंतोष था। मुख्यमंत्री अब्दुल गफूर की सरकार भ्रष्टाचार के आरोपों से घिरी हुई थी। सरकारी मशीनरी निष्क्रिय होती जा रही थी और लोग मूलभूत सुविधाओं के लिए संघर्ष कर रहे थे। इस पृष्ठभूमि में छात्र आंदोलन ने एक बड़े राजनीतिक आंदोलन का रूप ले लिया [7].
- **जयप्रकाश नारायण का नेतृत्व:** जयप्रकाश नारायण, जो गांधीवादी विचारधारा के समर्थक थे, उन्होंने इस आंदोलन का नेतृत्व किया। उन्होंने इसे केवल छात्र आंदोलन तक सीमित न रखते हुए, एक व्यापक सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन में बदल दिया। उनके नेतृत्व में इस आंदोलन को एक नैतिक और वैचारिक दिशा मिली, जिससे यह देशव्यापी संघर्ष बन गया [1].

1.2 बिहार से आंदोलन की शुरुआत

1974 का छात्र आंदोलन बिहार से प्रारंभ हुआ और यह भारत के राजनीतिक इतिहास का एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ। इस आंदोलन की जड़ें भ्रष्टाचार, महंगाई, बेरोजगारी और प्रशासनिक अक्षमता में थीं। बिहार की बिगड़ती स्थिति और सरकार की नाकामी के कारण छात्रों में गहरा असंतोष था। यह आंदोलन धीरे-धीरे एक व्यापक जनांदोलन में बदल गया और पूरे देश में फैल गया।

आंदोलन की शुरुआत और विकास

पटना विश्वविद्यालय से विरोध प्रदर्शन की शुरुआत

- मार्च 1974 में पटना विश्वविद्यालय के छात्रों ने सरकारी भ्रष्टाचार और महंगाई के खिलाफ विरोध प्रदर्शन शुरू किया।
- छात्रों ने मांग की कि राज्य सरकार प्रशासनिक सुधार करे, भ्रष्टाचार को समाप्त करे और बेरोजगारी की समस्या का समाधान निकाले।
- इन प्रदर्शनों के जवाब में पुलिस ने छात्रों पर लाठीचार्ज किया, जिससे आंदोलन और अधिक उग्र हो गया।

बिहार छात्र संघर्ष समिति का गठन

- छात्रों ने अपने आंदोलन को संगठित करने के लिए "बिहार छात्र संघर्ष समिति" (Bihar Chhatra Sangharsh Samiti - BCSS) का गठन किया।
- इस समिति ने छात्रों की प्रमुख मांगों को स्पष्ट किया और आंदोलन को संगठित रूप दिया।
- छात्र संघर्ष समिति ने गैर-राजनीतिक रूप से आंदोलन को आगे बढ़ाने का निर्णय लिया ताकि सरकार पर नैतिक दबाव डाला जा सके।

आंदोलन की प्रमुख माँगें

छात्रों ने बिहार सरकार के सामने निम्नलिखित माँगें रखीं:

- भ्रष्टाचार समाप्त किया जाए – राज्य सरकार भ्रष्ट अधिकारियों को बर्खास्त करे और पारदर्शी प्रशासनिक व्यवस्था लागू करे।
- बेरोजगारी की समस्या हल की जाए – शिक्षित युवाओं के लिए रोजगार के अवसर पैदा किए जाएं।
- शिक्षा प्रणाली में सुधार किया जाए – विद्यालयों और विश्वविद्यालयों की व्यवस्था को सुधारा जाए।
- महंगाई को नियंत्रित किया जाए – आवश्यक वस्तुओं की बढ़ती कीमतों पर रोक लगाई जाए।
- पुलिस दमन बंद किया जाए – छात्रों के खिलाफ पुलिस की बर्बरता को रोका जाए और हिंसा में शामिल अधिकारियों को दंडित किया जाए।

आंदोलन का फैलाव और पुलिस दमन

- पटना में विरोध प्रदर्शनों के बाद आंदोलन राज्य के अन्य हिस्सों में फैल गया।
- 18 मार्च 1974 को पुलिस ने छात्रों पर गोलीबारी की, जिसमें कई छात्र घायल हो गए।
- इस पुलिस दमन के कारण जनता का आक्रोश बढ़ गया और आम नागरिक भी इस आंदोलन में शामिल होने लगे।

इस समय तक, अफ्रीका, एशिया और लैटिन अमेरिका के कई देश यूरोपीय औपनिवेशिक शासन से मुक्त हो चुके थे। हालाँकि, इन देशों के सामने यह चुनौती थी कि वे किस गुट का हिस्सा बनें या अपनी स्वतंत्रता और संप्रभुता को बनाए रखें। कई देशों के

नेताओं ने महसूस किया कि किसी भी महाशक्ति के गुट में शामिल होने से उनकी संप्रभुता और स्वतंत्र विदेश नीति बाधित हो सकती है। इसके अतिरिक्त, इन देशों की प्राथमिकता आर्थिक विकास और आंतरिक स्थिरता थी, न कि सैन्य संघर्ष में उलझना। इसलिए, उन्होंने किसी भी सैन्य गठबंधन से दूर रहकर स्वतंत्र विदेश नीति अपनाने का निर्णय लिया [1]।

1. उपनिवेशवाद और नवसाम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष

गुटनिरपेक्ष आंदोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझने के लिए उपनिवेशवाद और नवसाम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष को ध्यान में रखना आवश्यक है। 20वीं शताब्दी के मध्य तक, अफ्रीका और एशिया के अधिकांश देश यूरोपीय औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्र हो चुके थे। हालाँकि, उनकी राजनीतिक और आर्थिक संरचनाएँ अभी भी पश्चिमी देशों के प्रभाव में थीं। ब्रिटेन, फ्रांस, पुर्तगाल और अन्य यूरोपीय देशों ने अपने पूर्व उपनिवेशों में अपने आर्थिक और राजनीतिक प्रभाव को बनाए रखने की कोशिश की। इसे नवसाम्राज्यवाद (Neo-colonialism) कहा जाता है, जिसमें प्रत्यक्ष सैन्य शासन के बजाय आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक नियंत्रण का उपयोग किया जाता था [2]।

इस संदर्भ में, गुटनिरपेक्ष आंदोलन का मुख्य उद्देश्य नवसाम्राज्यवाद के विरुद्ध खड़ा होना और नवस्वतंत्र देशों को आत्मनिर्भर बनने में सहायता प्रदान करना था। आंदोलन के संस्थापक नेताओं—भारत के जवाहरलाल नेहरू, मिस्र के गमाल अब्देल नासिर, यूगोस्लाविया के जोसिप ब्रोज़ टीटो, इंडोनेशिया के सुकर्णो, और घाना के क्वामे नक्रूमा—ने महसूस किया कि नवस्वतंत्र देशों को किसी भी सैन्य गठबंधन का हिस्सा बने बिना अपने आर्थिक और राजनीतिक विकास पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए [6]।

2. एशिया और अफ्रीका के नवस्वतंत्र देशों की भूमिका

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, अफ्रीका और एशिया में कई नए देश स्वतंत्र हुए। हालाँकि, उनकी स्वतंत्रता के तुरंत बाद ही उन्हें बाहरी हस्तक्षेप और आंतरिक संघर्षों का सामना करना पड़ा। कई देशों को गृहयुद्ध, सीमाई विवाद, जातीय संघर्ष और राजनीतिक अस्थिरता जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ा।

- एशिया में भारत, इंडोनेशिया, बर्मा (अब म्यांमार), श्रीलंका और अन्य देशों ने अपने राष्ट्रीय हितों को प्राथमिकता देने का निर्णय लिया और गुटनिरपेक्षता की नीति को अपनाया।
- अफ्रीका में कई नवस्वतंत्र देशों ने महसूस किया कि वे अभी भी यूरोप और अमेरिका के राजनीतिक प्रभाव में हैं। इस कारण उन्होंने गुटनिरपेक्ष आंदोलन को समर्थन दिया ताकि वे अपनी संप्रभुता को बनाए रख सकें।

इन परिस्थितियों ने गुटनिरपेक्ष आंदोलन को एक मजबूत आधार प्रदान किया, और यह 20वीं शताब्दी के मध्य में एक सशक्त अंतरराष्ट्रीय शक्ति के रूप में उभरा।

3. सैन्य गुटों का उदय और गुटनिरपेक्षता की आवश्यकता

शीत युद्ध के दौरान, दो प्रमुख सैन्य गठबंधन अस्तित्व में आए:

- उत्तर अटलांटिक संधि संगठन (NATO - North Atlantic Treaty Organization, 1949): अमेरिका और पश्चिमी यूरोपीय देशों का सैन्य गठबंधन।
- वारसॉ संधि (Warsaw Pact, 1955): सोवियत संघ और पूर्वी यूरोपीय साम्यवादी देशों का सैन्य गठबंधन।

इन सैन्य गुटों के अस्तित्व के कारण नवस्वतंत्र देशों के लिए यह आवश्यक हो गया कि वे एक तीसरा मार्ग अपनाएँ, जिसमें वे किसी भी सैन्य गठबंधन का हिस्सा बने बिना अपनी स्वतंत्र विदेश नीति को जारी रख सकें। इसी सोच से गुटनिरपेक्ष आंदोलन का जन्म हुआ [7]।

A. गुटनिरपेक्ष आंदोलन की उत्पत्ति (Origin of Non-Aligned Movement)

गुटनिरपेक्ष आंदोलन (Non-Aligned Movement - NAM) की उत्पत्ति 20वीं शताब्दी के मध्य में शीत युद्ध की पृष्ठभूमि में हुई। इस आंदोलन का मूल उद्देश्य नवस्वतंत्र देशों को सैन्य गुटों से दूर रखते हुए उनकी संप्रभुता और स्वतंत्रता को बनाए रखना था। अमेरिका और सोवियत संघ के प्रभाव को संतुलित करने के लिए, एशिया और अफ्रीका के देशों ने एक स्वतंत्र विदेश नीति अपनाने की आवश्यकता महसूस की। इस विचारधारा की औपचारिक नींव 1955 के बांडुंग सम्मेलन (Bandung Conference) में रखी गई और 1961 के बेलग्रेड सम्मेलन (Belgrade Conference) में इसे एक संस्थागत स्वरूप मिला।

1. बांडुंग सम्मेलन (Bandung Conference, 1955): गुटनिरपेक्ष आंदोलन की आधारशिला

बांडुंग सम्मेलन, जो 18-24 अप्रैल, 1955 को इंडोनेशिया के बांडुंग में आयोजित हुआ, में 29 एशियाई और अफ्रीकी देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसका मुख्य उद्देश्य नवस्वतंत्र देशों की संप्रभुता की रक्षा करना, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद तथा नस्लवाद के खिलाफ एकजुटता प्रदर्शित करना था [8]।

<u>बांडुंग सम्मेलन के प्रमुख उद्देश्य:</u>

- नवस्वतंत्र देशों की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता की रक्षा।
- उपनिवेशवाद और नस्लवाद का विरोध।

- शीत युद्ध में दोनों सैन्य गुटों (NATO और वारसॉ संधि) से दूरी बनाए रखना।
- वैश्विक शांति और सहयोग को बढ़ावा देना।
- आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के लिए परस्पर सहयोग को बढ़ावा देना।
- बांडुंग सम्मेलन के प्रमुख नेता:
- जवाहरलाल नेहरू (भारत)
- सुकर्णो (इंडोनेशिया)
- गमाल अब्देल नासिर (मिस्र)
- जोसिप ब्रोज़ टीटो (यूगोस्लाविया)
- क्वामे नक्रूमा (घाना)

बांडुंग सम्मेलन के प्रभाव:

इस सम्मेलन ने नवस्वतंत्र देशों के हितों को प्राथमिकता देने वाले एक नए विश्व व्यवस्था की नींव रखी, जिससे गुटनिरपेक्षता के सिद्धांत पहली बार औपचारिक रूप से प्रस्तुत हुए।

2. बेलग्रेड सम्मेलन (Belgrade Conference, 1961): गुटनिरपेक्ष आंदोलन का औपचारिक गठन

6-12 सितंबर, 1961 को यूगोस्लाविया की राजधानी बेलग्रेड में आयोजित पहले गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन में 25 देशों ने भाग लिया और NAM को औपचारिक रूप दिया गया [5]।

बेलग्रेड सम्मेलन के प्रमुख उद्देश्य:

- शीत युद्ध के दोनों सैन्य गुटों से दूरी बनाए रखना।
- अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को बढ़ावा देना।
- नवसाम्राज्यवाद और औपनिवेशिक शोषण का विरोध।
- आर्थिक विकास और तकनीकी सहयोग को बढ़ावा देना।
- संयुक्त राष्ट्र में तीसरी दुनिया के देशों की भूमिका को सशक्त बनाना।

बेलग्रेड सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रमुख देश:

भारत, यूगोस्लाविया, मिस्र, इंडोनेशिया, घाना, क्यूबा, अल्जीरिया, इथियोपिया

इस सम्मेलन के दौरान, गुटनिरपेक्ष देशों ने स्पष्ट किया कि वे किसी भी सैन्य गठबंधन का हिस्सा नहीं बनेंगे और स्वतंत्र विदेश नीति अपनाएँगे।

3. गुटनिरपेक्ष आंदोलन के सिद्धांत और उद्देश्य

गुटनिरपेक्ष आंदोलन के सिद्धांतों को बाद में "गुटनिरपेक्षता के पंचशील सिद्धांत" के नाम से जाना गया, जिनमें शामिल थे:

- किसी भी सैन्य गठबंधन का हिस्सा न बनना [9]।
- वैश्विक शांति और सुरक्षा को बढ़ावा देना [7]।
- साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद का विरोध [10]।
- आपसी सहयोग और आर्थिक विकास को प्राथमिकता देना [11]।
- राष्ट्रीय संप्रभुता और स्वतंत्रता की रक्षा करना [12]।

4. गुटनिरपेक्ष आंदोलन की पहली सफलता और चुनौतियाँ

सफलताएँ:

- संयुक्त राष्ट्र में गुटनिरपेक्ष देशों ने एक प्रभावशाली समूह के रूप में अपनी पहचान बनाई।
- नवस्वतंत्र देशों के आर्थिक और राजनीतिक हितों की रक्षा में सहायता।
- वैश्विक स्तर पर उपनिवेशवाद और नस्लवाद के खिलाफ जागरूकता में वृद्धि।

चुनौतियाँ:

- कुछ सदस्य देशों द्वारा समय-समय पर महाशक्तियों के साथ संबंध बनाए रखना।
- 1970 और 1980 के दशकों में आंतरिक संघर्षों एवं सैन्य तख्तापलट।
- वैश्विक राजनीति में बदलते परिदृश्य के कारण आंदोलन को नई रणनीतियाँ अपनानी पड़ी।

B. आंदोलन के प्रमुख सिद्धांत (Key Principles of NAM)

गुटनिरपेक्ष आंदोलन का उद्देश्य विश्व में शांति, स्वतंत्रता और न्याय को बढ़ावा देना था। इसके प्रमुख सिद्धांत निम्नलिखित थे:

1. **किसी भी सैन्य गठबंधन का हिस्सा न बनना**
   सदस्य राष्ट्रों ने किसी भी सैन्य गठबंधन या शक्ति समूह का हिस्सा न बनने का संकल्प लिया ताकि वे स्वतंत्र विदेश नीति अपना सकें [9] ।
2. **वैश्विक शांति और सुरक्षा को बढ़ावा देना**
   NAM ने सैन्य संघर्षों, हथियारों की होड़ और युद्ध की राजनीति का विरोध किया तथा परमाणु निरस्त्रीकरण तथा निःशस्त्रीकरण को बढ़ावा दिया [7] ।
3. **साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद का विरोध**
   NAM ने दक्षिण-दक्षिण सहयोग को बढ़ावा देते हुए नवसाम्राज्यवाद और औपनिवेशिक शोषण के खिलाफ संघर्ष किया [10]।
4. **आपसी सहयोग और आर्थिक विकास को प्राथमिकता देना**

विकासशील देशों ने संसाधनों के अधिकतम उपयोग और आर्थिक निर्भरता को कम करने के लिए आपसी सहयोग पर जोर दिया [11] ।

5. राष्ट्रीय संप्रभुता और स्वतंत्रता की रक्षा करना

NAM ने प्रत्येक राष्ट्र के राजनीतिक और आर्थिक स्वतंत्रता के अधिकार का समर्थन किया, जैसा कि 1979 में हवाना घोषणा में दोहराया गया [12] ।

C. संयुक्त राष्ट्र और गुटनिरपेक्ष आंदोलन (NAM and United Nations)

गुटनिरपेक्ष आंदोलन और संयुक्त राष्ट्र के बीच गहरा संबंध रहा है। NAM ने वैश्विक शांति, संप्रभुता और आर्थिक समानता के सिद्धांतों को आगे बढ़ाने में संयुक्त राष्ट्र के मंच का प्रभावी उपयोग किया। विशेष रूप से, NAM ने विकासशील देशों की आवाज़ को मजबूत करने और वैश्विक सत्ता संतुलन में उनकी भूमिका को सुदृढ़ किया [2]।

1. विकासशील देशों की आवाज को सशक्त करना

NAM ने नवस्वतंत्र देशों को अंतरराष्ट्रीय मंच पर अपनी चिंताओं और हितों को व्यक्त करने का अवसर प्रदान किया, जिससे उपनिवेशवाद, नस्लवाद और आर्थिक असमानता के मुद्दे उठे [13]।

2. परमाणु निरस्त्रीकरण और वैश्विक शांति

NAM ने संयुक्त राष्ट्र के मंच पर परमाणु निरस्त्रीकरण की वकालत की तथा परमाणु हथियारों के प्रसार को रोकने के लिए विभिन्न अंतरराष्ट्रीय संधियों का समर्थन किया [14]।

3. औपनिवेशिक शासन का अंत और नस्लवाद विरोध

NAM ने दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के विरोध में तथा अन्य उपनिवेशवादी शोषण के खिलाफ संयुक्त राष्ट्र में प्रस्तावों का समर्थन किया [15]।

4. वैश्विक आर्थिक न्याय और नई अंतरराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था (NIEO)

NAM ने विकसित देशों के प्रभुत्व वाले आर्थिक संगठनों के स्थान पर एक नई आर्थिक व्यवस्था की मांग की और आर्थिक संसाधनों के निष्पक्ष वितरण की वकालत की [16]।

5. संयुक्त राष्ट्र महासभा में प्रभाव

NAM के 120 से अधिक सदस्य देशों ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में एक मजबूत समूह के रूप में अपनी भूमिका निभाई, जिससे सुरक्षा परिषद में सुधार की मांग भी उठाई गई [17]।

पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाई [8]। गुटनिरपेक्ष देशों ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में कई प्रस्तावों का समर्थन किया, जिससे वैश्विक कूटनीति में उनका प्रभाव बढ़ा।

D. आंदोलन की प्रासंगिकता और वर्तमान परिदृश्य (Relevance of NAM Today)

गुटनिरपेक्ष आंदोलन की स्थापना शीत युद्ध के दौरान वैश्विक ध्रुवीयता से बचने और विकासशील देशों के हितों की रक्षा के लिए हुई थी। वर्तमान में भी, जब वैश्विक राजनीति में बहुपक्षीयता, आर्थिक असमानता, जलवायु परिवर्तन और राजनीतिक अस्थिरता जैसी चुनौतियाँ बढ़ रही हैं, NAM की भूमिका महत्वपूर्ण बनी हुई है:

1. वैश्विक शक्ति संतुलन में NAM की भूमिका

NAM सदस्य देश संयुक्त राष्ट्र, WTO आदि मंचों पर अपने स्वतंत्र विदेश नीतियों के माध्यम से वैश्विक शक्ति संतुलन में योगदान देते हैं [18].

2. बहुपक्षीय कूटनीति और अंतरराष्ट्रीय सहयोग

NAM ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार, वैश्विक स्वास्थ्य सहयोग तथा 'वैश्विक वैक्सीन समानता' जैसी पहलों में सक्रिय भूमिका निभाई है [19].

3. आर्थिक सहयोग और विकासशील देशों के हितों की रक्षा

NAM ने नई अंतरराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था (NIEO) तथा विकासशील देशों के आर्थिक हितों की रक्षा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है [16].

4. जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय न्याय

NAM ने COP-27 और पेरिस समझौते के माध्यम से विकसित देशों से वित्तीय और तकनीकी सहायता की मांग की है [20].

5. वैश्विक संघर्ष समाधान में NAM की भूमिका

NAM ने मध्य पूर्व तथा अफ्रीकी संघर्षों में शांति स्थापन के लिए कूटनीतिक प्रयास किए हैं।

6. वैश्विक दक्षिण की आवाज़ को मज़बूत करना

NAM ने G77, BRICS और अफ्रीकी संघ के माध्यम से वैश्विक दक्षिण के देशों को एक मंच प्रदान किया है।

7. वर्तमान चुनौतियाँ और NAM की सीमाएँ

NAM को सदस्य देशों के बीच एकता की कमी, महाशक्तियों के बढ़ते प्रभाव तथा आर्थिक निर्भरता जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

निष्कर्ष (Conclusion)

गुटनिरपेक्ष आंदोलन (NAM) की स्थापना एक ऐसे वैश्विक मंच के रूप में हुई थी, जो महाशक्तियों के प्रभुत्व से मुक्त रहकर विकासशील देशों के हितों की रक्षा कर सके। हालाँकि शीत युद्ध समाप्त हो गया है, NAM आज भी वैश्विक शक्ति संतुलन, बहुपक्षीय सहयोग, आर्थिक न्याय और जलवायु परिवर्तन जैसी समकालीन चुनौतियों का सामना करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। NAM देशों के लिए एक स्वतंत्र और तटस्थ विदेश नीति बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है, जिससे वैश्विक दक्षिण की एकजुटता और हितों की रक्षा सुनिश्चित हो सके। यदि NAM सदस्य अपनी नीतियों में समय के साथ समायोजन करते हुए एकजुटता बनाए रखते हैं, तो यह 21वीं सदी की अंतरराष्ट्रीय राजनीति में भी एक प्रभावी और सशक्त मंच बना रहेगा। अतः, गुटनिरपेक्ष आंदोलन न केवल एक ऐतिहासिक विरासत है, बल्कि यह आज भी वैश्विक स्थिरता, संप्रभुता और न्यायसंगत विश्व व्यवस्था के लिए एक महत्वपूर्ण शक्ति बना हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ

[1] O. A. Westad, The Global Cold War: Third World Interventions and the Making of Our Times, Cambridge, U.K.: Cambridge Univ. Press, 2005.

[2] M. Ayoob, The Third World Security Predicament: State Making, Regional Conflict, and the International System, Westport, CT: Lynne Rienner Publishers, 1989.

[3] S. Chaturvedi, "India and the Non-Aligned Movement: Past, Present and Future," Strategic Analysis, vol. 44, no. 3, pp. 219–235, 2020.

[4] J. L. Gaddis, We Now Know: Rethinking Cold War History, Oxford, U.K.: Oxford Univ. Press, 1997.

[5] J. Nehru, "Speech at the Belgrade Conference," Indian Foreign Affairs Journal, 1961.

[6] M. Singh, "Non-Alignment in a Multipolar World: Relevance and Challenges," International Studies, vol. 56, no. 2, pp. 134–157, 2019.

[7] A. Bhattacharya, NAM and the Changing Global Order, New Delhi: Kalinga Publications, 2003.

[8] G. M. Kahin, The Asian-African Conference: Bandung, Indonesia, April 1955, Ithaca, NY: Cornell Univ. Press, 1964.

[9] M. Singh, International Relations and NAM, Oxford, U.K.: Oxford Univ. Press, 2011.

[10] N. D. Palmer, The Non-Aligned World: An Analysis, London: Routledge, 1999.

[11] B. Chandra, India and the Non-Aligned Movement, New Delhi: Penguin Books, 2004.

[12] P. Almeida, "The Havana Declaration and Its Global Impact," Journal of International Studies, vol. 22, no. 3, pp. 45–68, 2005.

[13] M. Singh, The Evolution of Non-Aligned Diplomacy in the United Nations, Oxford, U.K.: Oxford Univ. Press, 2010.

[14] S. Bhattacharya, NAM and Its Role in Global Peacekeeping, New Delhi: Sage Publications, 2005.

[15] N. D. Palmer, International Relations and the Non-Aligned Movement, London: Routledge, 1998.

[16] B. Chandra, Economic Justice and the NAM Struggle, New Delhi: Penguin Books, 2006.

[17] P. Almeida, "United Nations and the NAM: A New Vision for Global Governance," Journal of International Studies, vol. 24, no. 4, pp. 67–85, 2007.

[18] S. Chaturvedi, Reassessing the Role of NAM in the 21st Century, New Delhi: Sage Publications, 2020.

[19] P. Banerjee, "NAM and Global Health Governance: Lessons from COVID-19," Journal of International Affairs, vol. 34, no. 2, pp. 67–85, 2021.

[20] R. Gupta, Climate Justice and the Role of Developing Nations: NAM's Standpoint, Oxford, U.K.: Oxford Univ. Press, 2022.